eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 5, Issue 01, Jan 2022

भारतीय ऋषि परंपरा में आर्थिक विचारः विदुर नीति के विशेष संदर्भ में।

[1]डॉ0 अमित जायसवाल
[1]असिस्टेंट प्रोफेसर अर्थशास्त्र, राजकीय महिला स्ना0 महाविद्यालय, बिन्दकी, फतेहपुर उ0प्र0।

Received: 10 Jan 2022, Accepted: 20 Jan 2022, Published with Peer Reviewed on line: 31 Jan 2022

Abstract

भारत के ऋषि परंपरा ज्ञान तथा विज्ञान के सृजन में विश्व स्तर पर अग्रणी रही है महात्मा विदुर इसी ऋषि परंपरा के वाहक हैं जो महाभारत काल में हुए और राजा के धर्म एवं नीति के विषय में इन्होंने अनेक उपदेश तत्कालीन महाराज धृतराष्ट्र को दिए थे इन विचारों में कुछ विचार ऐसे भी हैं जो आधुनिक अर्थशास्त्र की विभिन्न समस्याओं के निराकरण की दिशा में मार्गदर्शक हो सकते हैं प्रस्तुत पेपर में महात्मा विदुर द्वारा प्रदत्त उन विचारों को उद्धृत करने का प्रयत्न किया गया है जो एक उपभोक्ता की असीमित आवश्यकताओं की पूर्ति में संसाधन की दुर्लभता का समाधान प्रस्तुत करने के साथ ही राज्य के लोक कल्याणकारी स्वरूप को परिमार्जित कर सकते हैं।

शब्द संक्षेप– धर्म, नीति, संसाधन की दुर्लभता, ऋषि परंपरा, कल्याण अर्थशास्त्र।

Introduction

आर्थिक विचारों का इतिहास उतना ही पुराना है जितना कि मनुष्य का आर्थिक कार्य व्यवहार। भारत मे अर्थशास्त्र विषय के वैज्ञानिक एवं श्रृंखलाबद्ध सिद्धांतों के प्रतिपादन से कहीं पूर्व से ही आर्थिक विचार मौजूद रहे हैं एवं समकालीन राजनीति तथा धार्मिक मान्यताओं के साथ इनमें सामंजस्य देखा जा सकता है। चाणक्य के ग्रंथ अर्थशास्त्र में उनके राजनीतिक सिद्धांतों के साथ छुटपुट रूप से आर्थिक विचारों की भी व्याख्या मिलती है। चाणक्य ने मनुष्य के व्यवहार तथा जीविका को ही अर्थ कहा तथा मनुष्य से युक्त भूमि को अर्थ के रूप में परिभाषित किया इसी भूमि की प्राप्ति तथा उसके रक्षण के लिए किए जाने वाले उपायों का निरूपण करने वाले शास्त्र को उन्होंने अर्थशास्त्र कहा।

आधुनिक अर्थशास्त्र असीमित आवश्यकता के सीमित साधनों द्वारा पूर्ण करने में आने वाली चुनाव की समस्या के निराकरण में साधनों के कुशलतम उपयोग को रेखांकित करता है। प्रोफेसर जे के मेहता एक वैकल्पिक व्यवस्था देते हैं जिसमें वह आवश्यकताओं को मनुष्य कल्याण के लिए निम्नतम जरूरी आवश्यकताओं तक ही सीमित करने पर बल देते हैं । वस्तुतः भारतीय परंपरा में अर्थ को धर्म से ही जोड़कर देखा गया है और भारत की चेतना भी धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, का उद्घोष करती है।

भारतीय चिंतन में काम असीमित आवश्यकताओं का ही रूपक है तथा अर्थ इन आवश्यकताओं को पूरा करने वाले संसाधनों का रूपक है। असीमित आवश्यकताओं तथा उन्हें प्राप्त करने के लिए आवश्यक संसाधनों को धर्म के बंधन से बांधकर मोक्ष (कल्याण) की परिकल्पना भी इसी चिंतन में मौजूद है। महात्मा विदुर, भारत की ऋषि परंपरा का प्रतिनिधित्व करने वाले महापुरुष हैं जिनका कालखंड महाभारत कालीन है। अर्जुन को कृष्ण द्वारा दिए गए उपदेश की ही भांति महात्मा विदुर भी

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 5, Issue 01, Jan 2022

धृतराष्ट्र को अर्थ, धर्म, काम, नीति, कर्तव्य, लोभ, मोक्ष इत्यादि जैसे विषयों पर उपदेश देते हैं। महात्मा विदुर द्वारा धृतराष्ट्र को दिए गए उपदेश विदुर नीति नामक ग्रंथ में संकलित किए गए हैं, जिसमें विभिन्न प्रसंगों में आर्थिक विचार भी प्रस्फुटित होते हैं। यह आर्थिक विचार व्यष्टि अर्थात मनुष्य की एक इकाई से लेकर समष्टि, जिसमेंराजा तथा राज्य शामिल है, द्वारा धारणीय गुणों को समाहित किए हुए हैं।

व्यष्टि (मानव) के आर्थिक हितों के अनुकूल विचार–

एक मनुष्य का अपनी इच्छा या आवश्यकताओं, जिन्हें कामवासना के रूप के रूप में प्रस्तुत किया गया है, को पूर्ण करने के लिए आवश्यक संसाधन, जिन्हें अर्थ की संज्ञा दी गई है, को किस प्रकार धर्म की निष्ठा से एकात्म होना चाहिए इसके संदर्भ में विदुर ने कहा कि इंद्रियों तथा मन को जीतने वाले, जांच परख कर काम करने वाले धीर पुरुष की लक्ष्मी अत्यंत सेवा करती है (58, अध्याय 2)।

प्रोफेसर जे के मेहता की अपनी आवश्यकताओं को सीमित रखने का सिद्धांत भी इसी विचार का परिमार्जन है। अपनी असीमित आवश्यकताओं से अत्यंत धनी (साधन संपन्न) व्यक्ति भी किस प्रकार कष्ट का भागी बनता है इसे महात्मा विदुर इस प्रकार संबोधित करते हैं– जो धर्म और अर्थ का परित्याग करके इंद्रियों के वश में हो जाता है वह शीघ्र ही ऐश्वर्य, प्राण, धन तथा स्त्री से हाथ धो बैठता है (62, अध्याय 2)। इतना ही नहीं, जो इस जगत में धर्म तथा अर्थ का विचार करके विजय–साधन–सामग्री का संग्रह करता है वही उस सामग्री से युक्त होने के कारण सदा सुख पूर्वक समृद्धिशाली होता रहता है (67, अध्याय 2)।

प्रथम तो अपनी इच्छा को अपनी क्षमताओं से ज्यादा विस्तृत कर लेने के कारण ही मनुष्य कष्टों का भागी बनता है, जो निर्धन होकर भी बहुमूल्य वस्तु की इच्छा रखता है और असमर्थ होकर भी क्रोध करता है – यह दोनों ही अपने शरीर को सुखा देने वाले कांटों के समान हैं (61, अध्याय 1)।

इतना ही नहीं यदि मनुष्य का अर्थ संयोजन का कार्य धर्मच्युत (लोभ के अधीन) हो जाए तो इसे समस्त कष्टों के स्त्रोत की संज्ञा दी गयी है (14, अध्याय 1)। धार्मिक निष्ठा का पालन करके पुरुषार्थ से अर्थ का संचय करने वाला व्यक्ति ही विद्वान है तथा ऐसे व्यक्ति को महात्मा विदुर पंडित की संज्ञा देते हैं। पहले अध्याय में विभिन्न श्लोकों के माध्यम से विदुर ने ऐसे व्यक्ति के विभिन्न गुणों का वर्णन किया है।

इसी अध्याय के 46 श्लोक में महात्मा विदुर ने अर्थशास्त्र की एक और समस्या वितरण की समस्या का भी समाधान प्रस्तुत किया है और इस के संदर्भ में वह कहते हैं कि जो अपने द्वारा भरण पोषण के योग्य व्यक्तियों को बांटे बिना अकेले ही उत्तम भोजन करता है और अच्छा वस्त्र पहनता है उस से बढ़कर क्रूर कोई नहीं हो सकता (65, अध्याय 1)।

निसंदेह भारतीय परंपरा में असीमित इच्छाओं की पूर्ति के लिए साधनों के अतिरिक्त उपायुक्त की अपेक्षा स्वयं आवश्यकताओं को ही सीमित करने को प्रधानता दी गई है परंतु इसका अर्थ यह नहीं हुआ कि इन विचारों में अर्थ की प्रधानता नगण्य हो गई अर्थ या साधन अथवा धन जोकि अर्थ का

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 5, Issue 01, Jan 2022

ही एक स्वरूप है को यथेष्ट महत्वपूर्ण माना गया है जिसका जगह–जगह पर विदुर ने भी उद्धरण दिया है पहले अध्याय के ही 87 वें श्लोक में विदुर कहते हैं की धन पैदा करने वाली विद्या का ज्ञान ही मनुष्य लोक में सुख दायिनी होता है। यही नहीं इसी अध्याय के 90 वें श्लोक में मूर्ख व्यक्ति से अपनी जीविका चलाने वाले को विद्वान की संज्ञा तक दे डाली है आगे 94 वें श्लोक में विदुर मनुष्य लोक के 6 सुखों में एक सुख अपने वृत्ति से जीविका चलाने को मानते हैं और ऋण मुक्त होना भी एक सुख मानते हैं। इसके अगले श्लोक में विदुर दूसरों के भाग्य पर जीवन निर्वाह करने वाले को दुखी व्यक्ति की संज्ञा देते हैं। अन्यत्र (101, 102,103, अध्याय 1) अधिक धन की प्राप्ति, अपने वर्ग के लोगों में उन्नति तथा अभीष्ट वस्तु की प्राप्ति को हर्ष का सार माना है और इन्हें ही अलौकिक सुख के साधन के रूप में स्थापित भी किया है। जिस प्रकार वेदों का फल अग्निहोत्र करना है छात्र अध्ययन का फल सुशीलता और सदाचार है उसी प्रकार धन का फल दान करना और उपभोग करना है (65, अध्याय 7)।

निसंदेह इन सभी संदर्भों से स्पष्ट होता है कि एक मनुष्य के जीविका उपार्जन करने में धन के महत्व को उसके सुख से जुड़ा हुआ मानते हैं एवं अत्यंत महत्व देते हैं। इस प्रकार विदुर सुख के साधन के रूप में अर्थ के महत्व को स्वीकार करते हैं । अर्थ अर्जित करने के लिए धर्म सम्मत कार्यों को ही करना चाहिए इस पर भी बल दिया गया है। वस्तुतः जो पुरुष धर्म और अर्थ को प्राप्त करके अनायास ही अपनी उन्नति करने में समर्थ होता है विदुर ऐसे पुरुष को पंडित की संज्ञा देते हैं (66, अध्याय 3)

अधर्म से अर्जित अर्थ को दोषपूर्ण माना है। यदि अधर्म के द्वारा कमाए हुए धन से परलोक साधक यज्ञ आदि कर्म करता है तो मरने के पश्चात उसे उसका फल प्राप्त नहीं होता क्योंकि उसका धन बुरे रास्ते से आया होता है (66, अध्याय 7)। जो अधर्म से उपार्जित महान धनराशि को भी उसकी ओर आकृष्ट हुए बिना ही त्याग देता है वही सभी दुखों से मुक्त होता है (02, अध्याय 8)।

समष्टि (राज्य तथा राजा द्वारा प्रजा) के आर्थिक हितों के अनुकूल विचार।

महात्मा विदुर के उपदेशों में मनुष्य की एक इकाई (व्यष्टि) के आर्थिक हितों के साथ–साथ एक राजा के द्वारा धारण किए जाने वाले उन मूल्यों पर भी बल दिया गया है जो प्रजा (समष्टि) के आर्थिक हितों के अनुकूल हों।

धन के वितरण तथा आर्थिक विषमता के संदर्भ में विदुर कहते हैं कि भूपति को चाहिए कि अपने श्राजाश् नाम से और राजोचित श्छत्रश् धारणसे संतुष्ट रहे सेवकों को पर्याप्त धन दे, सब अकेले ही ना हड़प ले (27, अध्याय 6)। जो राजा अपने आश्रितों में धन का ठीक–ठीक बंटवारा नहीं करता तथा जो दुष्ट, कृतज्ञ और निर्लज्ज है ऐसा राजा इस लोक में त्याग देने योग्य है।

एक मनुष्य की भांति राजा में भी दान द्वारा आय की असमानता को दूर करने का गुण होना चाहिए परंतु अत्यधिक दान को भी विदुर हानि कर मानते हैं और कहते हैं कि अतिशय दानी मनुष्य के पास भी लक्ष्मी भय के मारे नहीं जाती (63, अध्याय 7)अर्थात धन सदुपयोग के साथ–साथ आय की असमानता दूर करने के लिए उसके दान की महत्वता तो है ही परंतु अति सर्वत्र वर्जित है की

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 5, Issue 01, Jan 2022

अवधारणा भी सदैव होनी चाहिए, क्योंकि उत्तम गाय की ही तरह यह लक्ष्मी भी अंधी होती है जो कहीं कहीं ही ठहरती है। (65 अध्याय 7)।

निष्कर्ष– भारत में आर्थिक विचारों का इतिहास आचार्य चाणक्य के द्वारा रचित उनके नीतिशास्त्र अर्थशास्त्र की रचना से जोड़कर देखा जाता हैए परंतु उनसे भी पूर्व भारतीय ऋषि परंपरा में भी ऐसे विचार प्रस्तुत किए गए हैं जो मनुष्य के कार्य व्यवहार में अर्थ से संबंधित रहे हैं जिन्हें हम आर्थिक विचार कह सकते हैं । ऐसे ही महाभारत काल में महात्मा विदुर के द्वारा दिए गए उपदेश आधुनिक अर्थशास्त्र की अनेक शाखाओं जैसे व्यष्टि तथा समष्टि अर्थशास्त्र की अनेकों समस्याओं जैसे उपभोक्ता के संतुलन, संसाधनों के वितरण तथा लोक कल्याणकारी राज्य की संकल्पना में सहायक हैं।

संदर्भ ग्रंथ–

1. ए बी नमिता संजय सुगंधी (2008)। इतिहास के पैटर्न के बीच दक्षिणी दक्कन में मौर्य साम्राज्य की बातचीत पर पुनर्विचार । प्रोक्वेस्ट। पीपी 88–89। आईएसबीएन 978–0–549–74441–2. 6 जून 2012
2. द कोर्टेसन एंड द साधु, माया, धर्म और ईश्वर के बारे में एक उपन्यास , अक्टूबर 2008, धर्म विजन, आईएसबीएन 978–0–9818237–0–6 , लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस
3. राज कुमार सेन और रतन लाल बसु (संस्करण) अर्थशास्त्र में अर्थशास्त्र , आईएसबीएन 81–7629–819–0 , डीप एंड डीप पब्लिकेशन्स प्रा। लिमिटेड, नई दिल्ली, 2006
4. कौटिल्य अर्थशास्त्र अंग्रेजी अनुवाद आर। शामशास्त्री द्वारा 1956 (आईएएसटी विशेषक और शब्दावली के साथ संशोधित संस्करण)
5. चाणक्य नीतिशास्त्र
6. विदुर – नीति (महाभारत उद्योग पर्व से) गीता प्रेस गोरखपुर , 2021।